फोटो: हॉर्नबिल से साभार

फोटो और आलेख:
आमोद कारखानिस

नानज में दो दिन

21 सितम्बर

वो मानो किसी जंग-लड़ाई वाली फिल्म का दृश्य था – हम दो सैनिक वर्दी में एक छोटे-से टीले के पीछे लेटे थे। आसपास छुपने की कोई दूसरी जगह न थी। आँखें टीले के अन्तिम छोर पर टिकी थीं। धीरे-धीरे लगभग रेंगते हुए हम एक-एक इंच आगे बढ़ रहे थे। थोड़ा बढ़ने के बाद हम रुक जाते। अन्दाज़ लगाते कि कहीं हम उन्हें दिखाई तो नहीं दिए! फिर इधर-उधर देखते हुए आगे बढ़ जाते।

कुछ दूरी पर हमारे साथी झाड़ियों में छिपे बैठे थे। दूरबीन हाथ में लिए वे टीले को देख रहे थे। साथ ही इशारा भी करते जाते कि हमें किस तरफ बढ़ना है। हमें बहुत ही सतर्कता से काम करना था वरना एक गलती सारे किए-कराए पर पानी फेर सकती थी।

यदि यह वाकई किसी जवान की डायरी होती तो अगला वाक्य होता – और फिर हमने दुश्मन के खेमे पर लगातार गोलीबारी करते हुए धावा बोल दिया। लेकिन यहाँ टीले के उस ओर कोई दुश्मन नहीं बल्कि एक दुर्लभ पक्षी था। उसके साथ शायद उसके बच्चे भी थे। वह घबराया हुआ-सा लग रहा था। यहाँ खुले मैदान में घास अच्छी है। कीड़े-मकोड़े आसानी से मिल रहे हैं। पर शायद वह तय नहीं कर पा रहा था कि यहाँ टिके रहना चाहिए या परिवार सहित कंटीली झाड़ियों में छिप जाना चाहिए।

यह किस्सा महाराष्ट्र के शोलापुर ज़िले के ग्रेट इण्डियन बस्टर्ड (गोडावन या सोनचिड़िया) अभयारण्य का है। यहाँ दूर-दूर तक फैला घास का मैदान है। हालाँकि जिस पक्षी की बात ऊपर की गई है वह सोनचिड़िया नहीं इंडियन कर्ज़र है। उसे देखने का यह मेरा पहला मौका था। एक अच्छी तस्वीर खींचने का मौका मैं छोड़ना नहीं चाहता था। मैं आगे बढ़ा। वन्य जीवों के फोटोग्राफर के साथ यही परेशानी होती है, खासतौर पर पक्षियों की तस्वीर लेने वालों के साथ। पक्षियों की नज़र इतनी तेज़ होती है कि ये दूर से देखकर ही उड़ जाते हैं। इसलिए इनके ज़्यादा करीब आसानी से नहीं जाया जा सकता है। मतलब यह हुआ कि पक्षियों की फोटोग्राफी में दिलचस्पी है तो एक अच्छा टेलीफोटो लैंस होना ज़रूरी है। मेरे पास 400 मिली मीटर का लैंस है। पक्षियों को बारीकी से दिखाने के लिए यह काफी नहीं है। दूर से फोटो खींचने के लिए कम से कम 600 मिली मीटर का लेंस होना ही चाहिए। पर इसकी दिक्कत यह है कि पहाड़ों में लम्बी दूरी तय करना हो तो भारी उपकरणों को ढोना मुश्किल हो जाता है। लैंस बड़ा और भारी हो तो ट्राइपॉड भी तो चाहिए। वरना हाथों को चाहे जितना स्थिर रखो, वे थोड़ा बहुत तो हिलते ही हैं। लैंस अगर बड़ा हो तो हाथ के हिलने का असर भी तो बड़ा दिखेगा, हैना। और अगर ट्राइपॉड लगाकर खड़े रहोगे तो समझ लो पंछी तो उड़ ही गए!

तो फिलहाल मेरे पास कोई चारा नहीं था सिवाय इसके कि मैं छिपते-छिपाते, ज़मीन पर रेंगते हुए, अपने कपड़े गन्दे करते हुए यह तस्वीर लूँ। खैर, मैं इसमें कितना सफल हुआ, यह मैं तुम पर छोड़ता हूँ।

आज का दिन बहुत अच्छा था। घास के मैदानों के कई पक्षी दिखे – इंडियन कर्ज़र, लार्क, कई प्रकार के पिपिट वगैरह।

नानज में ज़्यादातर घास के मैदानों में रहने वाले जीव ही दिखते हैं। यह जगह उन्हीं पक्षियों के लिए ज़्यादा अच्छी है जो अपना दाना-पानी ज़मीन पर ही ढूँढते हैं। जैसे लवा या चाण्डूल। यहाँ आम जंगलों में दिखाई देने वाले पक्षी नहीं मिलते हैं। हर इकोसिस्टम में अलग-अलग प्रजातियाँ पाई जाती हैं।

चाण्डूल बड़ा ही मज़ेदार पक्षी है। यह ज़मीन पर हमेशा एकदम तनकर खड़ा होता है ताकि ज़्यादा से ज़्यादा दूरी तक देख सके। पास जाने की कोशिश करो तो यह उड़ता नहीं है बल्कि कुछ फीट दूर चलकर फिर वैसे ही तनकर तुम्हें देखने लगेगा। चाण्डूल आसानी से उड़ता नहीं है। खतरे से बचने के लिए भी यह उड़ने की बजाय जल्दी-जल्दी चलना पसन्द करता है। इसके पीछे भागो तभी यह उड़ता है। घास के मैदान के पक्षियों का यह खास गुण होता है। उनके लिए उड़ने की बजाय चलना आसान होता है। विकास की प्रक्रिया में घास के मैदान में पाए जाने वाले कई सारे पक्षियों का आकार धीरे-धीरे बढ़ता गया और उड़ने की क्षमता कम होती गई। इमू और शुतुरमुर्ग इसके अच्छे उदाहरण हैं। सोनचिड़िया का आकार भी बड़ा है लेकिन उसने उड़ना फिर भी नहीं छोड़ा।

चाण्डूल

22 सितम्बर

यहाँ कृष्णमृग (ब्लैक बक) के बड़े-बड़े झुण्ड आमतौर पर दिख जाते हैं। जिनकी वन्यजीवों में अभी हाल ही में दिलचस्पी हुई थी वे तो इन दौड़ते-रुकते बड़े-छोटे कृष्णमृगों की तस्वीरें लेने से खुद को रोक ही नहीं पाते थे।

देखे गए पौधों और पक्षियों की हमारी लिस्ट बढ़ती जा रही थी लेकिन इस लिस्ट में अभी तक वह नहीं थी जिसके लिए हम यहाँ तक आए थे – सोनचिड़िया। हमें लगा यदि हमारे पास एक दिन और हो तो भी हम पूरे क्षेत्र में नहीं घूम पाएँगे। इसलिए हमने छोटी-छोटी टोलियों में बँटने का निर्णय लिया। तय हुआ कि कुछ मज़ेदार दिखते ही सभी को खबर की जाएगी। इसमें मोबाइल हमारे बहुत काम आया। हाँ, मोबाइल को वाइब्रेशन पर रखना ज़रूरी था नहीं तो मोबाइल की घण्टी भाण्डा फोड़ देती।

दोपहर का समय था। हम लोग सुबह से चल रहे थे और अब तो पेट में चूहे भी कूदने लगे थे। खाने का सामान साथ ही था। हम कोई छायादार जगह ढूँढने लगे। पास में छोटी-सी ढलान थी। शायद वहाँ पहले कोई छोटा बाँध रहा होगा लेकिन अब तो यहाँ पेड़ ही पेड़ हैं। खाने और आराम करने के लिए यह एक बेहतरीन जगह है। इससे पहले कि हम खाने बैठते एक दोस्त थोड़ा ऊपर चढ़ा और चारों तरफ देखने लगा। अचानक वह मुड़ा और हाँफता हुआ ऐसा उतरा जैसे कोई पत्थर लुढ़ककरआया हो। हाँफते-हाँफते वह बोला, "वहाँ, वहाँ कुछ है ... शायद कुत्ते! दूरबीन दो।"

"कुत्ते? यहाँ? पता नहीं था कि यहाँ जंगली कुत्ते भी होते हैं? कहीं ऐसा तो नहीं कि हम अभयारण्य के एक सिरे पर पहुँच गए हैं और घरेलू कुत्ते अन्दर आ गए हैं?"

हमने लपककर देखा। वे कुत्ते नहीं भेड़िए थे। भूख-प्यास सब भूलकर हम उन्हें देखने लगे। भेड़ियों का झुण्ड कहीं और देख रहा था। एक भेड़िया बैठा था, बाकी सब खड़े थे।

थोड़ी देर बाद वह भेड़िया उठा। सभी ने चहल-कदमी शुरू कर दी। धीरे-धीरे वे फैल गए। उनमें से एक आगे-आगे दौड़ने लगा। वे दक्षिण की ओर जा रहे थे। लेकिन थोड़ी-थोड़ी दूर पर। वहाँ कृष्णमृगों (हिरण) का झुण्ड था।

(शेष भाग पेज 25 पर)

नानज के विशाल गिरगिट

फोटो हॉर्नबिल से साभार

शिकार की टोह में भेड़िया

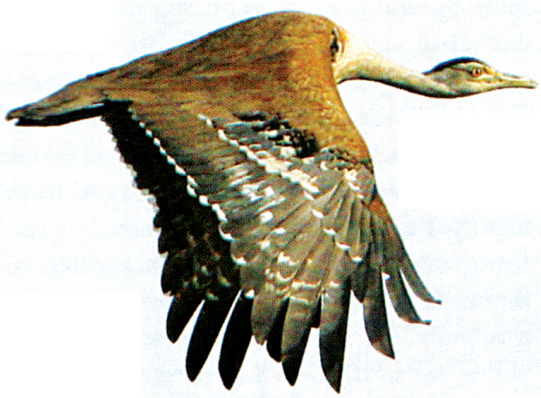

भेड़ियों को देखते ही हिरण अपने चिर-परिचित अन्दाज़ में ऊँची-ऊँची छलांग लगाकर दौड़ने लगे। जैसे बताना चाहते हों कि देखो हम कितनी तेज़ दौड़ सकते हैं! कुछ ही देर में सारे हिरण गायब हो गए और भेड़ियों के हाथ कुछ नहीं लगा।

देर शाम गए एक टोली से खबर आई – अभयारण्य के दूर किनारे पर उन्होंने एक सोनचिड़िया देखी थी। सब कुछ छोड़कर हम उसी दिशा की ओर मुड़ गए। मुझे डर था कि हमारे पहुँचने तक कहीं वह चली ना जाए। रास्ते भर हम लगभग भागते ही रहे। आखिरकार हमने उसे मैदान में घूमते हुए देख ही लिया – क्या भव्य-विशाल पक्षी! हम उसे आश्चर्य से देखते रहे। वह भी जैसे हमारा ही इन्तज़ार कर रही थी। उसने फुर्ती से दौड़ना शुरू किया। लम्बे-लम्बे डग भरकर तेज़ गति पकड़ी और शान से पंख फैलाते हुए पहाड़ी के उस पार उड़ गई। क्या अद्‌भुत नज़ारा था!